

राजस्थान उच्च न्यायालय
जयपुर बेंच

एस.बी. सिविल रिट याचिका संख्या 7675/2002

कमल सिंह पुत्र लालू राम उर्फ मोहन लाल, उम्र लगभग 40 वर्ष, निवासी पंच बती
निरंकारी भवन के सामने, काली पाटन, जिला टोंक (राजस्थान)।

-----याचिकाकर्ता

बनाम

1. राजस्थान राज्य, जरिये सचिव, गृह विभाग, सचिवालय, जयपुर।
2. उप महानिदेशक पुलिस, जयपुर, रेंज III, जयपुर।
3. जिला पुलिस अधीक्षक, जिला टोंक।

-----उत्तरदाता

याचिकाकर्ता (ओं) की ओर से : श्री प्रवीण जैन

उत्तरदाता (ओं) की ओर से : सुश्री करिश्मा सोनी

श्री विनोद कुमार गोयल-एजीसी

जस्टिस अनूप कुमार ढंड

आदेश

29/01/2025

रिपोर्टयोग्य

"प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत यह सुनिश्चित करते हैं कि न्याय न केवल हो, बल्कि यह भी दिखे कि न्याय हो रहा है।" एक तर्कसंगत आदेश निष्पक्ष प्रशासन की मूलभूत आवश्यकताओं में से एक है। निष्पक्षता सुनिश्चित करने में इसका अत्यधिक महत्व है। अदालतें अब इसे प्राकृतिक न्याय का तीसरा सिद्धांत कहती हैं।

1. इस रिट याचिका के माध्यम से जिला पुलिस अधीक्षक, टोंक द्वारा पारित दिनांक 22.05.2000 के आदेश को चुनौती दी गई है, जिसके तहत याचिकाकर्ता, जो एक पुलिस कांस्टेबल है, को अनिवार्य सेवानिवृत्ति की सजा दी गई है।

2. उपरोक्त आदेश से व्यथित होकर, याचिकाकर्ता ने पुलिस उप महानिदेशक, जयपुर रेंज II, जयपुर (संक्षेप में, 'अपीलीय प्राधिकारी') के समक्ष अपील प्रस्तुत की, हालाँकि, उसे दिनांक 31.10.2000 के आदेश द्वारा खारिज कर दिया गया। इसके बाद, याचिकाकर्ता द्वारा राज्य के समक्ष एक पुनरीक्षण याचिका प्रस्तुत की गई, जिसे भी दिनांक 23.05.2002 के आदेश द्वारा खारिज कर दिया गया।

3. याचिकाकर्ता के अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि राजस्थान सिविल सेवा (वर्गीकरण, नियंत्रण और अपील) नियम, 1958 (संक्षेप में, '1958 के नियम') के नियम 16/18 के तहत याचिकाकर्ता को एक आरोप-पत्र दिया गया था जिसमें आरोप लगाया गया था कि दो आरोपी व्यक्ति कमल श्रृंगी और बद्री को याचिकाकर्ता को दो अन्य पुलिस अधिकारियों, हेड कांस्टेबल- मोती लाल और कांस्टेबल- राम प्रसाद के साथ अदालत में ले जाने के लिए सौंपा गया था, लेकिन इस बीच आरोपियों में से एक (बद्री) याचिकाकर्ता और अन्य सह-दोषी कर्मचारी की लापरवाही के कारण उनकी हिरासत से फरार हो गया। अधिवक्ता ने दलील दी कि याचिकाकर्ता ने उपरोक्त आरोप-पत्र का विस्तृत जवाब पेश किया था, जिसमें स्पष्ट रूप से उल्लेख किया गया था कि अभियुक्तों में से एक, कमल श्रृंगी, शौच के लिए गया था, इसलिए हेड कांस्टेबल मोती लाल के निर्देश पर, याचिकाकर्ता उसे उपरोक्त उद्देश्य के लिए शौचालय ले गया और उसकी

अनुपस्थिति में दूसरा अभियुक्त बद्री, हेड कांस्टेबल मोती लाल और कांस्टेबल राम प्रसाद की हिरासत से फरार हो गया। अधिवक्ता का तर्क है कि याचिकाकर्ता उपरोक्त घटना के लिए ज़िम्मेदार नहीं था। हालाँकि, जाँच के दौरान इस तथ्य पर उचित रूप से विचार नहीं किया गया और बाद में, विवादित आदेश पारित कर दिया गया जिसके तहत याचिकाकर्ता को अनिवार्य सेवानिवृत्ति दे दी गई। अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा पारित उपरोक्त आदेश से व्यथित होकर, 1958 के नियम 23 के तहत एक वैधानिक अपील पुलिस उप महानिदेशक के समक्ष प्रस्तुत की गई थी, हालाँकि, इसे 31.10.2000 के आदेश के तहत सरसरी तौर पर, बिना कोई निष्कर्ष दर्ज किए और बिना कोई तर्कपूर्ण और स्पष्ट आदेश पारित किए खारिज कर दिया गया था। अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि अपीलीय प्राधिकारी ने यह पाते हुए अपील को खारिज कर दिया कि याचिकाकर्ता की ओर से लापरवाही हुई थी। अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि अपीलीय प्राधिकारी को कारण प्रदान करके और उसमें उल्लिखित कथनों पर विचार करके याचिकाकर्ता की अपील का फैसला करना था, लेकिन कोई कारण दर्ज नहीं किया गया और आदेश को एक ही पंक्ति में पारित कर दिया गया। अधिवक्ता का निवेदन है कि उपर्युक्त आदेश को याचिकाकर्ता द्वारा पुनर्विलोकन प्राधिकारी के समक्ष चुनौती दी गई थी, किन्तु उक्त पुनर्विलोकन याचिका भी उसी प्रकार निरस्त कर दी गई। अतः इन परिस्थितियों में इस न्यायालय का हस्तक्षेप अपेक्षित है।

4. प्रतिवादी पक्ष के अधिवक्ता ने याचिकाकर्ता के अधिवक्ता द्वारा उठाए गए तर्कों का विरोध किया और कहा कि दो आरोपियों को सुरक्षित अभिरक्षा और न्यायालय तक पहुँचाने के लिए तीन पुलिस अधिकारियों को सौंपा गया था, लेकिन याचिकाकर्ता सहित तीनों पुलिस अधिकारियों की लापरवाही के कारण यह घटना घटी और एक आरोपी उनकी हिरासत से फरार हो गया। अधिवक्ता ने कहा कि उपरोक्त घटना याचिकाकर्ता

और अन्य सह-अपराधियों की घोर लापरवाही के कारण हुई। परिणामस्वरूप, इन परिस्थितियों में, अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा याचिकाकर्ता पर अनिवार्य सेवानिवृत्ति का दंड लगाते हुए आक्षेपित आदेश पारित किया गया। अधिवक्ता ने आगे कहा कि यद्यपि याचिकाकर्ता को अनिवार्य सेवानिवृत्ति प्रदान की गई थी और अन्य सह-अपराधियों को प्रारंभ में सेवा समाप्ति के दंड से दंडित किया गया था, तथापि, मामले के पुनःप्रेषण के बाद, मोती लाल के सेवा समाप्ति आदेश को उनकी पेंशन में 10% कटौती के साथ अनिवार्य सेवानिवृत्ति में संशोधित कर दिया गया था। अतः, इन परिस्थितियों में, तीनों अपराधियों को समान दंड दिया गया है, और इसलिए, इन परिस्थितियों में, इस न्यायालय का हस्तक्षेप उचित नहीं है।

5. बार में प्रस्तुत प्रस्तुतियों को सुना और उन पर विचार किया तथा अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री का अवलोकन किया।

6. अभिलेख के अवलोकन से पता चलता है कि दिनांक 22.05.2000 के आक्षेपित आदेश द्वारा याचिकाकर्ता को अनिवार्य सेवानिवृत्ति के दंड से दंडित किया गया था। इससे व्यथित होकर, याचिकाकर्ता ने नियम 1958 के नियम 23 के अंतर्गत अपीलीय प्राधिकारी के समक्ष एक वैधानिक अपील दायर की, जिसे एक ही पंक्ति में यह कहते हुए खारिज कर दिया गया कि, "याचिकाकर्ता की ओर से घोर लापरवाही हुई है" और अपीलीय प्राधिकारी द्वारा याचिकाकर्ता की अपील को अस्वीकार करते समय कोई कारण नहीं बताया गया है।

7. यह तथ्य निर्विवाद है कि राजस्थान सिविल सेवा (वर्गीकरण, नियंत्रण एवं अपील) नियम, 1958 के नियम 16 के अंतर्गत पारित किसी भी आदेश पर नियम 23 के अंतर्गत अपील की जा सकती है। 1958 के नियम 30 में अपील में विचारणीय बिंदुओं का उल्लेख है। त्वरित संदर्भ हेतु नियम 30 निम्नानुसार प्रस्तुत है:-

“30. अपीलों पर विचार।

- (1) निलंबन के आदेश के विरुद्ध अपील के मामले में, अपीलीय प्राधिकारी यह विचार करेगा कि नियम 13 के उपबंधों के आलोक में और मामले की परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए निलंबन का आदेश न्यायोचित है या नहीं और तदनुसार आदेश की पुष्टि करेगा या उसे रद्द करेगा।

(2) नियम 14 में विनिर्दिष्ट किसी भी दंड को अधिरोपित करने वाले आदेश के विरुद्ध अपील के मामले में, अपीलीय प्राधिकारी इस बात पर विचार करेगा कि - (क) क्या इन नियमों में निर्धारित प्रक्रिया का अनुपालन किया गया है और यदि नहीं, तो क्या ऐसे गैर-अनुपालन के परिणामस्वरूप संविधान के किसी भी प्रावधान का उल्लंघन हुआ है या न्याय में विफलता हुई है;

(ख) क्या वे तथ्य सिद्ध हो चुके हैं जिन पर आदेश पारित किया गया था;

(ग) क्या सिद्ध तथ्य आदेश पारित करने के लिए पर्याप्त औचित्य प्रदान करते हैं; और

(घ) क्या लगाया गया दंड अत्यधिक, पर्याप्त या अपर्याप्त है और सरकारी सेवक को अपना मामला स्पष्ट करने के लिए व्यक्तिगत सुनवाई का अवसर देने के पश्चात्, यदि वह ऐसा चाहे और आयोग से परामर्श करने के पश्चात्, यदि मामले में ऐसा परामर्श आवश्यक हो, आदेश पारित करना -

(i) दंड को अपास्त करना, कम करना, पुष्ट करना या बढ़ाना; या

(ii) मामले को उस प्राधिकारी को, जिसने दंड लगाया था, या किसी अन्य प्राधिकारी को, ऐसे निर्देशों के साथ भेजना, जो वह मामले की परिस्थितियों में उचित समझे: बशर्ते कि -

(i) अपीलीय प्राधिकारी कोई ऐसा बढ़ा हुआ दंड नहीं लगाएगा, जिसे लगाने के लिए न तो वह प्राधिकारी और न ही वह प्राधिकारी, जिसने वह आदेश दिया है, जिसके विरुद्ध अपील की गई है, मामले में सक्षम है।

(ii) बढ़ा हुआ दंड लगाने वाला कोई भी आदेश तब तक पारित नहीं किया जाएगा, जब तक कि अपीलकर्ता को ऐसे बढ़ाए गए दंड के विरुद्ध कोई अभ्यावेदन करने का अवसर न दे दिया जाए; और

(iii) यदि अपीलीय प्राधिकारी द्वारा अधिरोपित किया जाने वाला बढ़ा हुआ दंड नियम 14 के खंड (iv) से (vii) में विनिर्दिष्ट दंडों में से एक है और मामले में नियम 16 के अधीन जांच पहले से नहीं की गई है, तो अपीलीय प्राधिकारी, नियम 18 के उपबंधों के अधीन रहते हुए, स्वयं ऐसी जांच करेगा या निर्देश देगा कि ऐसी जांच की जाए और उसके बाद ऐसी जांच की कार्यवाही पर विचार करने के बाद ऐसे आदेश पारित करेगा, जैसा वह उचित समझे।

1958 के नियमों का नियम 30 स्पष्ट रूप से इंगित करता है कि अपीलीय प्राधिकारी को अपील का निर्णय एक स्पष्ट आदेश द्वारा करना चाहिए, जिसमें यह निष्कर्ष निकालने के लिए पर्याप्त कारण शामिल हों कि अनुशासनात्मक प्राधिकारी द्वारा पारित आदेश उचित है या नहीं। अपीलीय प्राधिकारी द्वारा एक पंक्ति में दर्ज किया गया निष्कर्ष, जिसमें कहा गया है कि "याचिकाकर्ता की ओर से घोर लापरवाही हुई थी",

1958 के नियमों के नियम 30 के अंतर्गत निहित अनिवार्य प्रावधानों का पर्याप्त अनुपालन नहीं दर्शाता है।

8. विधि का यह स्थापित प्रस्ताव है कि जब भी किसी वैधानिक अपीलीय प्राधिकारी के समक्ष कोई अपील प्रस्तुत की जाती है, तो उक्त प्राधिकारी से यह अपेक्षा की जाती है कि वह एक तर्कसंगत और स्पष्ट आदेश पारित करे, परन्तु इस मामले में, अपीलीय प्राधिकारी द्वारा उपरोक्त कार्य नहीं किया गया है, जिससे प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन हुआ है। यही गलती पुनरीक्षण प्राधिकारी द्वारा भी की गई है और पुनरीक्षण याचिका पर भी तर्कसंगत और स्पष्ट आदेश पारित करके निर्णय नहीं दिया गया है।

9. अपीलीय आदेश में यह स्पष्ट नहीं किया गया है कि अपीलीय प्राधिकारी ने अपील में उठाए गए आधारों पर कैसे और किस प्रकार विचार किया। अपीलीय प्राधिकारी का यह कर्तव्य था कि वह उन आधारों पर विचार करता और एक तर्कसंगत और स्पष्ट आदेश पारित करके इन आधारों पर अपने निष्कर्ष दर्ज करता। अपीलीय प्राधिकारी से अपेक्षा की जाती है कि वह अपील का निर्णय ठोस और उचित कारणों को दर्ज करके और एक स्पष्ट आदेश पारित करके करे और यदि अपील का निर्णय सरसरी तौर पर किया जाता है, तो यह प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन है।

10. **रूप सिंह नेगी बनाम पंजाब नेशनल बैंक एवं अन्य** के मामले में, जिसकी रिपोर्ट **2009 (2) एससीसी 570** में दी गई है, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने माना है कि "चूंकि अनुशासनात्मक प्राधिकारी या अपीलीय प्राधिकारी द्वारा पारित आदेशों के गंभीर परिणाम होते हैं, इसलिए, उन्हें कारणों से समर्थित होना चाहिए।"

11. **माया देवी (मृतक), जरिये विधिक उत्तराधिकारी बनाम राज कुमारी बत्रा (मृतक), जरिये विधिक उत्तराधिकारी एवं अन्य, 2010 (9) एससीसी 486** में दर्ज मामले में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने माना है कि "न्यायालय और वास्तव में ऐसे सभी

प्राधिकारियों को, जो व्यक्तियों के अधिकारों और दायित्वों को निर्धारित करने की शक्ति का प्रयोग करते हैं, अपने आदेशों के समर्थन में कारण अवश्य देने की आवश्यकता के अंतर्निहित न्यायिक आधार की इस न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णयों की एक लंबी श्रृंखला में जांच की गई है।"

12. **अक्षय कुमार राउत्रे बनाम भारतीय स्टेट बैंक, भुवनेश्वर और अन्य के मामले में, जैसा कि 2019 (III) आईएलआर सी यूटी 521 में रिपोर्ट किया गया है, उड़ीसा उच्च न्यायालय ने माना है कि "आदेश या तो अपने आप में बोलना चाहिए, यदि इसका निष्कर्ष निचले प्राधिकारी के निष्कर्ष से अलग है या यह निचले प्राधिकारी के आदेश के माध्यम से भी बोल सकता है, यदि यह निचले प्राधिकारी के आदेश की पुष्टि या सहमति में है और निचले प्राधिकारी के आदेश में निष्कर्षों के कारण शामिल हैं।"**

13. इस न्यायालय की समन्वय पीठ ने **हरि नारायण बनाम भारत संघ एवं अन्य (एस.बी. सिविल रिट याचिका संख्या 1746/1975, 09.12.1980 को निर्णीत)** मामले में यह माना है कि "स्थिति यह स्पष्ट प्रतीत होती है कि सभी अर्ध-न्यायिक आदेशों में, आदेशों को तर्कसंगत बनाया जाना चाहिए, जिसमें यह दर्शाया जाना चाहिए कि आदेश पारित करने वाले प्राधिकारी द्वारा विवेक का प्रयोग किया गया है, ताकि जिस व्यक्ति के विरुद्ध आदेश पारित किया गया है, उसे प्रभावी उपचार मिल सके।"

14. यहां तक कि, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **मध्यमम ब्रॉडकास्टिंग लिमिटेड बनाम भारत संघ के मामले में, 2023(13) एससीसी 401** में रिपोर्ट किया, तर्कसंगत आदेश पारित करने के नियम के महत्व पर विचार किया है और इसे पैरा 64, 64.1 से 64.5 में निम्नानुसार माना गया है: -

64. प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत यह सुनिश्चित करते हैं कि न्याय न केवल हो, बल्कि यह भी दिखे कि न्याय हो रहा है। एक तर्कसंगत

आदेश निष्पक्ष प्रशासन की मूलभूत आवश्यकताओं में से एक है। निष्पक्षता सुनिश्चित करने में इसका अत्यधिक महत्व है; विद्वान और न्यायालय अब इसे प्राकृतिक न्याय का तीसरा सिद्धांत कहते हैं। एक तर्कसंगत आदेश का नियम पाँच महत्वपूर्ण उद्देश्यों की पूर्ति करता है:

64.1 सबसे पहले, यह पारदर्शिता और जवाबदेही सुनिश्चित करता है। यह शक्ति के मनमाने प्रयोग पर अंकुश लगाता है। लॉर्ड डेनिंग ने कहा था कि कारण बताने में "एक न्यायिक निर्णय और एक मनमाने निर्णय के बीच एक बड़ा अंतर निहित है"। न्यायमूर्ति भगवती ने मेनका गांधी बनाम भारत संघ, 1978 (1) एससीसी 248 में कहा था कि यह नियम "कानून के शासन को सुरक्षित रखने के लिए बनाया गया है और न्यायालय को किसी भी मामले में इसे लागू करते समय इसे नज़रअंदाज़ करने के लिए बहुत तत्पर नहीं होना चाहिए।"

64.2 द्वितीयतः, कारणरहित आदेशों का व्यावहारिक प्रभाव यह होता है कि निर्णय न्यायिक पुनर्विलोकन के दायरे से बाहर हो जाता है। कारणरहित आदेश न्यायालयों की न्यायिक पुनर्विलोकन की शक्ति को सीमित कर देता है, क्योंकि न्यायिक पुनर्विलोकन का क्षेत्र केवल विधि अथवा तथ्यों पर अंतिम निष्कर्ष तक ही सीमित नहीं होता, बल्कि उस निष्कर्ष तक पहुँचने के लिए दिए गए कारणों तक भी विस्तृत होता है। अपील के अधिकार पर लगाया गया कोई भी प्रतिबंध अनिवार्यतः यह अर्थ रखता है कि न्यायिक पुनर्विलोकन का क्षेत्र संकुचित हो जाता है।

64.3. तीसरा, तर्कों की स्पष्टता राज्य की मनमानी कार्रवाई की चिंताओं को कम करके न्यायसंगत निर्णय पर पहुँचने में सहायक

होती है। इससे विचारों में स्पष्टता आती है और अप्रासंगिक तथा बाहरी विचारों से बचा जा सकता है। 64.4 चौथा, इससे संस्था की वैधता बढ़ती है क्योंकि निर्णय निष्पक्ष प्रतीत होंगे। इस बात की अधिक संभावना होती है कि तर्कपूर्ण आदेश के माध्यम से प्राप्त निष्कर्ष न्यायसंगत हो।

64.5 पाँचवाँ, तर्कसंगत आदेश सूचना के अधिकार और खुली सरकार के संवैधानिक लक्ष्य को आगे बढ़ाने के लिए हैं। गोपनीयता पक्षपात, भ्रष्टाचार और अन्य बुराइयों को जन्म देती है जो कानून के शासन पर आधारित शासन मॉडल के विपरीत हैं।

15. माननीय सर्वोच्च न्यायालय, उड़ीसा उच्च न्यायालय और इस न्यायालय की समन्वय पीठ द्वारा पारित उपरोक्त निर्णयों पर विचार करने के बाद, यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि अपीलीय प्राधिकारी ने याचिकाकर्ता द्वारा प्रस्तुत अपील को अस्वीकार करते समय विवेक का प्रयोग नहीं किया है, क्योंकि उसके अवलोकन से ही स्पष्ट है कि उसे बिना कोई कारण दर्ज किए, सरसरी तौर पर खारिज कर दिया गया है और इसके अलावा, समीक्षा प्राधिकारी ने भी इसे नज़रअंदाज़ किया है। अतः, दोनों आदेश कानून की दृष्टि में टिकने योग्य नहीं हैं।

16. उपरोक्त के मद्देनजर, अपीलीय प्राधिकारी द्वारा पारित दिनांक 31.10.2000 का आक्षेपित आदेश और पुनरीक्षण प्राधिकारी द्वारा पारित दिनांक 23.05.2002 का आदेश निरस्त किए जाने योग्य हैं और इन्हें निरस्त कर अपास्त किया जाता है। यह मामला अपीलीय प्राधिकारी को भेजा जाता है ताकि वह याचिकाकर्ता और प्रतिपक्षी पक्ष को सुनवाई का उचित अवसर प्रदान करने के बाद अपील पर पुनः सुनवाई करे और तत्पश्चात, इस आदेश की प्रमाणित प्रति प्राप्त होने की तिथि से तीन माह की अवधि के भीतर, यथाशीघ्र, तर्कसंगत और सुस्पष्ट आदेश पारित करके विधि के अनुसार इसका कड़ाई से निर्णय करे।

17. तदनुसार, वर्तमान रिट याचिका को निस्तारित किया जाता है।
18. स्थगन आवेदन और सभी लंबित आवेदन, यदि कोई हों, को भी निस्तारित किया जाता है।
19. इस आदेश से पृथक होने से पूर्व, यह स्पष्ट किया जाता है कि इस न्यायालय ने मामले के गुण-दोषों पर कोई टिप्पणी नहीं की है और अपीलीय प्राधिकारी को ऊपर की गई टिप्पणियों से प्रभावित हुए बिना, रिकॉर्ड पर उपलब्ध सामग्री के आधार पर अपील पर नए सिरे से निर्णय लेने की स्वतंत्रता होगी।

(जस्टिस अनूप कुमार ढंड), जे

आशु/29

"अस्वीकरण- इस निर्णय का अनुवाद स्थानीय भाषा में किया जा रहा है, एवं इसका प्रयोग केवल पक्षकार इसको समझने के लिए उनकी भाषा में कर सकेंगे एवं यह किसी अन्य प्रयोजन में काम नहीं ली जायेगी। सभी अधिकारिक एवं व्यवहारिक उद्देश्यों के लिए उक्त निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही विश्वसनीय माना जायेगा एवं निष्पादन एवं क्रियान्वयन में भी उसी को उपयोग में लिया जायेगा।"



Tarun Mehra

Advocate
